International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 28-08-2021, Accepted: 14-09-2021, Published: 30-09-2021
Volume 7, Issue 5, 2021, Page No. 124-125

मानवतावादी दृष्टि और 'कबिरा खड़ा बजार में'

ज्योत्स्ना आनंद
एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, रामजस कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

सारांश
आलेख का ध्येय मानवतावादी दृष्टि के सन्दर्भ में जनवादी नाटक 'कबिरा खड़ा बजार में' का बहुआयामी विश्लेषण प्रस्तुत करना है। भीष्म साहनी कृत नाटक की वर्तमान परिप्रेक्ष्य के सन्दर्भ में बहुआयामी सार्थकता को सिद्ध कर सोदाहरण प्रस्तुत करना ही प्रमुख उद्देश्य रहा है।

मूल शब्दः मानवतावाद, संघर्ष, जनवादी नाटक, व्यक्तित्व, चेतना

प्रस्तावना

भीष्म साहनी संघर्षशील चेतना के रचनाकार हैं। उन्होंने व्यक्ति व समाज के अंतर्विरोधों को समझा, परखा और जीवन में इसी चिंतन को आत्मसात् करके साहित्य में उसका प्रयोग किया। 'कबिरा खड़ा बजार में' उनका एक जनवादी नाटक है। प्रस्तुत नाटक कबीरदास के जीवन को आधार बनाकर लिखा गया है। इसमें तत्कालीन परिवेश को उभारने का प्रयास किया गया है। तत्कालीन परिवेश के व्यभिचार, भ्रष्टाचार और विंसगतियों को इस नाटक में सफलतापूर्वक रूपायित किया गया है। नाटक की मूल संवेदना, कबीर के जीवन से संबंधित है किंतु उनके काल की धर्मान्धता, अनाचार, तानाशाही आदि के सामाजिक परिप्रेक्ष्य में उनके निर्भीक, सत्यान्वेषी व प्रखर व्यक्तित्व को दर्शाना ही मुख्य उद्देश्य रहा है।

'कबिरा खड़ा बजार में' नाटक के माध्यम से मानवतावादी भावनाओं को अभिव्यक्ति प्रदान की गई है। समस्त मानवता का कल्याण करने की कामना और समस्त मनुष्यों में एकता स्थापित करने का उद्देश्य ही साहित्य में मानवतावाद है। साहित्य का उद्देश्य मानवतावाद ही होना चाहिए। 'कबिरा खड़ा बजार में' का कबीर बाह्य आडंबरों को समाप्त कर सभी मनुष्यों को समान महत्त्व दिए जाने के लिए संघर्षरत है। यद्यपि वह आध्यात्मिक अधिक है परंतु फिर भी शोषण का विरोध करता है। यही कारण है कि गरीब लोग भी उसे पसंद करते हैं। मौलवी के शब्दों में, "बहुत लोग तो नहीं हैं, उस जैसे कवित्त कहने वाले तो दो–तीन ही हैं, लेकिन गरीब लोगों, हिंदू–मुसलमान नीच जात के सभी लोगों को ये घेर लेते हैं। वे इनकी बात सुनते हैं।[1]"

शासक वर्ग कभी नहीं चाहता कि शोषित वर्ग में एकता स्थापित हो क्योंकि वह तो शोषित, दलित व पीड़ित वर्ग का शोषण करना चाहता है। यदि उनमें एकता स्थापित हो गई तो वे मुकाबला करने के लिए उभरकर सामने आ सकते हैं। यही कारण है कि मानवतावाद में धर्म–अर्थ–वर्ग के आधार पर होने वाले भेदभाव का विरोध किया जाता है। 'कबिरा खड़ा बजार में' यह धार्मिक भेदभाव अनेक स्थलों पर उभरा है और कबीर के माध्यम से इसका विरोध भी किया गया है। एक व्यक्ति अपने साथ बीती एक घटना सुनाते हुए कहता है – "हमारे गाँव में साधु–महात्मा पधारे। बहुत पहुँचे हुए हैं। हमने सोचा, चलो साधु–महात्मा के पास अपना शंका–समाधान कर आवें। हम हाथ बांधकर उनके सामने जा खड़े हुए। .... वह फिर तेवर चढ़ाकर बोले, कौन जात? .... हमने कहा, ... हम चमार हैं मालिक। इस पर साधु महाराज ने डण्डा उठा लिया और हम वहाँ से चले आये।[2]"

यह हमारे देश में वर्षों से चले आ रहे धार्मिक भेदभाव का यथार्थ चित्र है। आज की स्थिति पूरी तरह बदली नहीं है। 'कबिरा खड़ा बजार में' नाटक में अनेक स्थलों पर इस भेदभाव का विरोध किया गया है।

सेवा–भावना भी मानवतावाद की एक मुख्य विशेषता है। सेवा का अर्थ है, मानव के प्रति मानव की सहानुभूति। मानव का तिरस्कार करने के स्थान पर निःस्वार्थ भाव से उसकी मदद करना सेवा कहलाता है। 'कबिरा खड़ा बजार में' का कबीर इस भावना से ओत–प्रोत है। वह सत्संग द्वारा लोगों को धार्मिक बाह्याडंबरों का विरोध करने का परामर्श देता है। उन्हें भेदभाव छोड़ एक ही ईश्वर का चिंतन करने का परामर्श देता है। वास्तव में कबीर इन सब कृत्यों द्वारा सामान्य जन की सेवा ही कर रहा है। वह धार्मिक, जातिगत बंधनों को त्यागकर समस्त मानवता के उत्थान की बात करता है। उसकी भावना भौगोलिक बंधनों से जकड़ी न होकर सभी मनुष्यों को समदृष्टि से देखती है।

मानवता के संपूर्ण विकास के लिए शक्ति विभाजन अत्यंत आवश्यक है। जब कुछ हाथों में शक्ति केंद्रित हो जाती है तब शोषण की प्रक्रिया प्रारंभ होती है और तत्पश्चात् शोषित वर्ग का अपने अधिकारों के लिए संघर्ष प्रारंभ होता है। निरंतर संघर्ष से भी जब अभीष्ट की प्राप्ति नहीं होती है तो विद्रोह जन्म लेता है। 'कबिरा खड़ा बजार में' नाटक का कबीर मानव मात्र को बाह्य आडंबरों का परित्याग कर एक ही ईश्वर की आराधना करने की शिक्षा देता है। इस प्रकार वह समाज सुधार में संलग्न है और इसके लिए उसे शासन से, उच्च वर्ग से और धर्म के ठेकेदारों से संघर्ष करना पड़ता है।

वास्तव में हर मनुष्य को जीने के लिए संघर्ष करना पड़ता है और साहित्य मानव जीवन की अभिव्यक्ति करता है। समस्त मानव समाज के दो ही वर्ग हैं दृ शक्तिसंपन्न मनुष्य और संघर्षशील मनुष्य। संघर्ष द्वारा ही मनुष्य शक्ति प्राप्त कर सकता है और शक्ति से ही सुख–प्राप्ति संभव है। 'कबिरा खड़ा बजार में' नाटक में कायस्थ इसी शक्ति का महत्त्व व्यक्त करता है – "जिसके हाथ में भगवान ने शक्ति दी है उसकी जात नहीं देखी जाती मालिक, उसकी महिमा दिखी जाती है।[3]"

'कबिरा खड़ा बजार में' नाटक मध्ययुगीन समाज का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करता है। तत्कालीन समाज में व्याप्त रूढ़ियों, बाह्य आडंबरों, भेदभाव आदि का यथार्थ विश्लेषण इस नाटक में हुआ है। इसमें शक्ति संपन्न मनुष्यों द्वारा दलित–पीड़ित? शक्तिहीन लोगों पर किए जाने वाले निर्मम अत्याचारों की अभिव्यक्ति भी यथार्थ शैली में हुई है। आर्थिक वैषम्य का चित्रण भी इस नाटक

में हुआ है। कबीर के शब्दों में, "जुलाहों की यही खूबी है बादशाह सलामत, लोगों को कपड़े पहनाते हैं, खुद चिथड़ों में घूमते हैं। जुलाहों को चिथड़े भी नसीब हो जाये, गनीमत है ।[4]"
स्पष्ट है कि वस्तु का निर्माता और उत्पादक ही उनका उपभोग नहीं कर सकता क्योंकि उसकी आर्थिक सिथति उसे दो समय का भोजन भी नहीं दे पाती। किंतु उसके श्रम पर अन्य धनी लोग मजे करते हैं। इस संदर्भ में कबीर का ही कथन है– "किसी के आँसू दूसरे के लिए मोती जुटा देते हैं और उसे अपने लिए चिथड़े भी नहीं जुटा पाते।[5]" इस प्रकार धनी वर्ग भाग्य के नाम पर, निर्धनों के श्रम पर ऐश्वर्य–विलास के साधनों को जुटाते हैं और विडंबना यह है कि उन्हीं निर्धनों को पेट भर भोजन भी नहीं मिलता। इस प्रकार इस नाटक में आर्थिक यथार्थ भी उभरकर आया है।
'कबिरा खड़ा बजार में' नाटक में कबीर द्वारा धार्मिक रूढ़ियों का भी खण्डन किया गया है। मध्ययुग में धर्म और जात–पात का बहुत महत्त्व दिया जाता था। उस समय पूरा हिंदू समाज जाति, उपजाति, वर्ग, उपवर्ग में बंटा हुआ था। कायस्थ इसी तथ्य की अभिव्यक्ति करता है – "ब्राह्मणों की ही 108 जातियाँ हैं। एक–एक जाति की फिर 'उपजात हैं, हजारों जाते हैं।[6]"
'कबिरा खड़ा बजार में' की परिस्थिति आज की स्थिति से भी जुड़ती है। इसमें हमें अपने ही अवचेतन से जुड़ी आज के जीवन की समस्याएँ साकार होती दिखाई पड़ती हैं। कबीर का विद्रोही व्यक्तित्व आज भी भारतीय जन–मन और उसकी चेतना को प्रभावित किए हुए है। हमारे समक्ष वे सभी सामाजिक समस्याएँ आज भी मौजूद हैं जिन्हें कबीर के युग ने भोगा था। विरोध कबीर ने किया था। यही कारण है कि इस नाटक की मूल संवेदना कबीरकालीन भी है और समकालीन भी। अन्याय, शोषण के विरुद्ध लड़ने वाले मध्ययुगीन सुत कबीर के तेजस्वी व्यक्तित्व का पुनर्निर्माण इस नाटक में किया गया है। कबीर ऐसे किसी धर्म में विश्वास नहीं करता जो मनुष्य को मनुष्य से अलगाता हो, उसे एक–दूसरे का दुश्मन बनाता हो। वह तो मनुष्य की इंसानियत का विश्वासी है। कबीर के यह विचार आज के धर्मनिरपेक्ष भारतीय समाज में भी उतने ही मूल्यवान और प्रासंगिक हैं जितने उस युग में रहे होंगे।

निष्कर्ष

अस्तु य यह संपूर्ण नाटक मध्यकाल की स्थितियों का वास्तविक दर्पण होते हुए भी सामयिक संदर्भों की व्यंजनाओं से वर्तमान समय में भी गूँज रहा है । निस्संदेह 'कबिरा खड़ा बजार में' में अत्यधिक प्रासंगिक नाटक है।

संदर्भ

1. कबिरा खड़ा बजार में, भीष्म साहनी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ–37
2. कबिरा खड़ा बजार में, भीष्म साहनी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ–47
3. कबिरा खड़ा बजार में, भीष्म साहनी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ–26
4. वही, पृष्ठ–93
5. वही, पृष्ठ–94
6. कबिरा खड़ा बजार में, भीष्म साहनी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ–25